Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies,
Online ISSN 2278-8808, SJIF 2018 = 6.371, www.srjis.com
PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL, JAN-FEB, 2019, VOL- 6/49

'कन्हावत' में नैतिक बोध और भारतीय संस्कृति

डॉ. मुकेश कुमार*
Email: tanwarmukesh46@gmail.com

नीति का सम्बन्ध उस मार्ग से है जिसके द्वारा हम किसी अन्य प्राणी का अहित किए बिना अपना हित साधन करे। नीति का उद्देश्य मानव-जीवन का गतिरोध दूर कर उसे अग्रसर बनाना है। जायसी के 'कन्हावत' काव्य में 'व्यवहार और समाज' नीतियों की प्रधानता है, जिसमें भारतीय संस्कृति का उज्ज्वल स्वरूप दृष्टिगत होता है। 'व्यवहार और समाज' नीतियों के अन्तर्गत उन्होंने माता-पिता पुत्र, शत्रु, गर्व, दान, भाग्य, परिवार, प्रेम आदि नीतियों का विस्तार से वर्णन किया है।

1. धर्म और आचार

जायसी एक सहृदय कवि थे, उनकी धार्मिक प्रवृत्तियों की झलक उनकी रचनाओं में देखी जा सकती है। किसी विशेष धर्म का प्रचार-प्रसार करना उनका लक्ष्य नहीं रहा। धर्म का जहां तक सम्बन्ध था, वह उनकी आत्मा तक ही सीमित था। कोई मुस्लिम रहे या हिन्दू इसकी उन्हें जरा भी चिन्ता नहीं थी। उनकी धार्मिक नीति की सबसे बड़ी विशेषता थी, केवल और केवल मानव मात्र का प्रेम।

'मानुस पेम भएउ बैकुंठी। नाहिं त काह छार एक मूठी।[1]

ईश्वर -

सूफी सम्प्रदाय का संबंध इस्लामी विचारधारा से प्रभावित इस्लाम धर्म से है। इस्लाम धर्म को हम भक्तिभावपूर्ण धर्म भी कह सकते हैं। भक्ति मार्ग में अपने आराध्य की महत्ता का ज्ञान करके उसके प्रतिपूर्ण श्रद्धा परमावश्यक है। इसी प्रकार इस्लाम धर्म में अल्लाह की शक्ति तथा सामर्थ्य का ज्ञान करके केवल उसके वचन व कृपा पर श्रद्धा

* एसोसिएट प्रोफेसर, श्री गुरु तेग बहादुर खालसा कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय. दिल्ली

Copyright © 2019, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

रखना परमावश्यक है। सूफी भावधारा ने इस भक्ति मार्ग में स्वतन्त्र-चिन्तन तथा दार्शनिक विचारधारा का समावेश किया है।[2]

'कन्हावत' में जायसी का विश्वास है कि ईश्वर अजन्मा, अवर्ण, अरूप है। वह निष्कलंक है, निर्मल है।

ना वह काहुक जरमा होई। ना वैकेहू जरमा कोई।।
न काहू उस जोत सरूपा। ना कोई अइस बनसि अनूपा।।
निह कलंक निर्मल सब माहाँ। जिस लग परै धूप और छाहा।।
सब कह दिहस जरम औजाई। आप अबरन अरुप बिहाई।।[3]

वहीं जायसी कृष्ण में ब्रह्माण्ड के समाहित होने का उल्लेख करते हैं। राधा ने उनके विराट रूप के दर्शन किए।

परी दीठ परभुवन नौखंडा। सरम पतार लोक ब्रह्माण्डा।।
देखी परबत सुमेरु पहाराऔर जाँवत सकल संसारा।।
चाँद सुरूज और नखततराई। और जो आरथ कहँदुनियाई।।
सातो समुद्र अठरह गण्डा। दीख पिंडमँह सब ब्रह्माण्डा।।[4]

जायसी भारतीय लोक परम्परा में आस्था रखने वाले कवि थे। उन्होंने कन्हावत में राम के अवतार लेने का भी वर्णन किया है।

दुख पायों राम अवतारा। अब नहि अवतरों यहि संसारा।।
जरम मोर सब बिपत मँह बीता। एक इस्तिरी जानों सीता।।
सो पुनि हर रावन लै गयऊ। बहु संताप प्रिथमी जन भयऊ।।[5]

गुरू -

सूफी साधना में परमात्मा से एकत्व प्राप्त करने की प्रक्रिया में बताया गया है कि साधक को (मुर्खीद) गुरू का बराबर चिन्तन करना चाहिए। गुरु अपनी आध्यात्मिक शक्ति द्वारा साधना में रत शिष्य की रक्षा करता है और साधना पथ पर अग्रसर होते रहने में उसकी सहायता करता रहता है। गुरू उसके प्रत्येक विचार और कर्म का दर्शक बना रहता है। इस प्रकार साधना करते-करते एक ऐसी स्थिति आती है, इसे सूफी 'पुरुष में

Copyright © 2019, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

लय' कर देना कहते हैं। गुरु अपनी अलौकिक शक्ति से शिष्य की इस स्थिति को सहज ही जान जाता है। इस स्थिति के आने पर गुरु उस साधक को सम्प्रदाय के संस्थापक दिवंगत पीर की दिव्य शक्ति के अधीन कर देता है और गुरु की शक्ति के सहारे साधक पीर को प्रत्यक्ष करता है। साधक फिर पीर का अंग बन जाता है और दिव्य शक्ति का अधिकारी हो जाता है। इसे 'पीर में लय' कर देना कहते हैं। जायसी की रचनाओं में हमें गुरु-परम्परा का उल्लेख मिलता है। 'कन्हावत' में वे शेख बुरहान् की चर्चा करते हैं और उन्हें धर्म का प्रकाश फैलाने वाला बताते हैं।

कहौं हकीकत अगुवागुरु। रोशन दीन दुनी सुरखुरु।।
नाव पियार शेखबुहान्। नगर कालपी हुत थानू।।[6]

जायसी के समान ही कबीर ने भी गुरु की महिमा का गुणगान करते हुए कहा है कि गुरु की कृपा से ज्ञान के चक्षु खुलते हैं तथा उसके द्वारा ही ब्रह्म का साक्षात्कार होता है।

सतगुरू कीम हिमा अनंत, अनंत दिखावणहार।
लोचन अनंत उघाडिया, अनंत दिखावणहार।।[7]

संसार -

मध्यकाल में प्रायः सभी कवियों ने संसार को मिथ्या निस्सार कहा है। यहीं तक नहीं, वे तो इसके वास्तविक अस्तित्व का ही प्रत्याख्यान करते हैं और इसे स्वप्न के समान निस्सार कहते हैं। इसलिए उनकी दृष्टि में मन को कभी भी संसार में नहीं लगाना चाहिए।

यह ऐसा संसार है जैसा सेंबल फूल।
दिन दस के व्यौहार कौं झूठें रंगिन भूलि।।[8]

जायसी ने 'कन्हावत' में संसार के ऐश्वर्य, सुख सम्पति सबको मिथ्या माना है। इनकी ओर आकर्षित होना मिट्टी की ओर ध्यान देने के बराबर है। क्योंकि यह साधक को पथ भ्रष्ट करने में सहायक है। क्योंकि एक दिन राजा को या रंक सभी को इस संसार से जाना है।

Copyright © 2019, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

कोऊन रहा आइ सैंसारा। जो मुव फेरि नभा अवतारा।।

झूठा धन्द प्रिथमी, जगमाया लपटान।।

दुयउकर झारचलासब, और पादें पछतान।।[9]

गर्व -

अनेक मादक वस्तुओं के नशे की भांति अभिमान या गर्व का भी नशा होता है। जिससे अभिभूत होकर व्यक्ति को वास्तविक स्थिति का ज्ञान नहीं होता। धन, रूप, विद्या आदि की अतिशयता से व्यक्ति में अभिमान, अहंकार आदि दुर्गुण आ जाते हैं। व्यक्ति को कभी भी किसी चीज़ का घमंड नहीं करना चाहिए, क्योंकि अभिमानी का सिर सदैव नीचा रहता है।

झूठा गरब कौंन्ह जैं, तिहँ खोय ससंसार।

हौं हौं कहि पछताते, जब रे परे मुँहछार।[10]

माया -

माया को हिन्दी नीति कवियों ने बहुत प्रबल कहा है। यह ऐसी है कि सिद्ध पुरुषों पर भी अपना प्रभाव दिखाए बिना नहीं रहती।

सुर नर मुनि कोउ नहिं, जेहिन मोह माया प्रबल।

अस बिचारि मनमाहि, भजिय महा माया पतिहि।।[11]

जायसी ने 'कन्हावत' में नाम-रूप जगत में माया के विस्तार का वर्णन करते हुए कहा है कि माया के मोह को त्यागो क्योंकि यह प्रमात्मा से मिलन में बाधक है।

माया मोह हीउ जस, सबै अडा रहुमेंट।

दूसर हियें न भाइव, एक गुसाई भेंट।।[12]

संत दादू ने भी माया के सुख को पाँच दिनों का सुख कहा है और वह भी ऐसा सुख कि उसे जाने में तनिक भी देरी नहीं लगती।

(दादू) माया का सुख, पंच दिन, गव्यों कहा गवांर।

सुपिनैं पायोंराज धन, जातन लागै बार।।[13]

Copyright © 2019, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

आशा -

मन का यह भाव कि अमुक कार्य हो जाएगा या अमुक वस्तु मिल जाएगी 'आशा' कहलाती है। हिन्दू धर्मशास्त्र तथा हिन्दी के नीतिकाव्य में आशा का बड़ा विरोध किया गया है। गीता में फल की आशा किए बिना कर्म करने की शिक्षा दी गई है। यह भी आशा का विरोध ही है। इन विरोधों का प्रधान कारण यह है कि आशा मूलतः सभी दुःखों का मूल है। यदि व्यक्ति आशा करेगा तो उसे जीवन में कभी निराश न होना पड़ेगा और ऐसी स्थिति में शोक या दुःख से बहुत अंशों से दूर रहकर शान्ति के साथ वह जीवन व्यतीत कर सकेगा। इसी को लक्ष्य करके 'कन्हावत' में जायसी वर्णन करते हुए कहते हैं जब कंस ने कृष्ण को अपने मल्लों के साथ अकेले युद्ध करने को कहा तो नंद और ग्वाल सभी भयभीत हो गये। तब कृष्ण के कहने से लोगों के मन में आशा बंधी और जितने ग्वाल थे सब मैदान में आ डटे। ग्वालों के आते ही दैत्य भी सामने आये ग्वालों और दैत्यों में जमकर युद्ध हुआ। सब दैत्य भाग खड़े हुए। कंस अपने किले में छिपकर भाग गया। विजयी कृष्ण के साथ सारे ग्वाल गाते-बजाते खुशी से गोकुल लौटे।

देखि कस मन भयउ अनन्दू। आय सुभा हो हकारा नंदू।
तुम्हरे सरों करे जो गोपाला। हम रहुँ दुतहि रखनियाँ माला।।[14]
कन्हके कहत भई मन आसा। रूपचन्द, गुरुचन्द पाउहुलासा।।
खेवचन्द देवचन्द औमहराजू। हरिचन्द जैचन्दलै पँवराजू।।[15]

2. समाज -

जायसी युगीन समाज में प्रचलित भारतीय हिन्दू धर्म तथा पौराणिक ग्रन्थों के प्रति जनता आस्था का भाव रखती थी। इसी कारण उन्होंने अपने अन्य काव्य-ग्रन्थों की तरह जहाँ भी अवसर मिला हिन्दू देवी-देवताओं का उल्लेख किया है।

एक दिन कृष्ण ने सुना कि मथुरा में यमुना के किनारे अपने दल-बल के साथ मछन्दरनाथ के शिष्य गोरखनाथ के अनुयायी कोई सिद्ध आ कर ठहरे हुए हैं। जितने भी लोग हैं, वे सभी सिद्ध और पवन – आहारी हैं। वे लोग नाना प्रकार के रूप धारण करते हैं। यह सुनकर कृष्ण उस सिद्ध योगी को देखने निकले, उनके साथ दस सहस्र

Copyright © 2019, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

भक्त भी गोरखसिद्ध के पास गये। योगी ने कृष्ण को गृहस्थ-जीवन त्यागकर योगी बन जाने की सलाह दी। कृष्ण ने भोग को ही तप बताया और अपने को धर्मरत होने की बात कही। इस प्रकार दोनों अपने-अपने मतयोग और भोग की सराहना करते रहे। अन्त में अपने-अपने सिद्धान्त की श्रेष्ठता सिद्ध करने के लिए दोनों ने परस्पर वार करने का निश्चय किया और कहा कि जो मरे वही पराजित समझा जाय। दोनों ने एक-दूसरे के विरूद्ध अपने-अपने शस्त्र चलाये, किसी का भी अनिष्ट नहीं हुआ। अन्त में निष्कर्ष निकला।

देखि चरित दूनों कर, भाधर हिपा लोग।
जोगी केर जोग भल, भोगी कर भल भोग।।[16]

मित्र-

जायसी ने अपने काव्य-ग्रन्थों में अपने चार मित्रों का वर्णन किया है। ध्यान देने की बात है कि किसी काव्य-परम्परा में, मसनवी पद्धति में भी, मित्रों के वर्णन की कोई मान्यता नहीं रही। ऐसा किसी प्रबन्ध काव्य में नहीं मिलता है, जिससे जायसी ने प्रेरणा ली हो। यह उनकी अपनी रूचि मानी जा सकती है।

चार मीत बिघनै बड़ कीन्हें। तेरसूल के गोही दीने।।
पहिले अबाबकर सतबारु। एक मंत्री औ वीर अपारु।।
दूसरे उमर पुरुखहुत आदी। जीता न कोई बाद कै बादी।।
तिसरै उसमान पंडित सयाने। पढ़ि पुरान जिहि अरथ बखानै।।
चौथे अलीसिंघ बरियारू। खरग देखि काँपै संसारू।।[17]

जायसी ने कन्हावत में कृष्ण और सुदामा को सच्चे और हितैषी मित्रों के रूप में चित्रित किया है जहाँ ऊँच-नीच, राजा रंक का कोई भेद नहीं है। जब कृष्ण मथुरा के निकट पहुँचते हैं तो कहते हैं कि यहाँ मेरा मित्र सुदामा रहता है, मैं उसके पास कुछ समय विश्राम करूंगा।

कन्हजाइ मधु पुरनियराने। देखँहि नगर रूप सुहाने।।
जाइअ क्रूर मोर कछु चाहा। अँबहि कँहदेखु आवत आहा।।[18]

Copyright © 2019, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

भाई -

कहा जाता है भाई जैसा मित्र और भाई जैसा शत्रु संसार में कोई नहीं है। बात भी ठीक है। एक ओर लक्ष्मण और भरत का उदाहरण है तो दूसरी ओर सुग्रीव और बाली का। 'कन्हावत' में जायसी ने कृष्ण और बलराम दोनों भाईयों की प्रीति का चित्रण किया है। कृष्ण-बलराम अक्रूर के साथ आये। मार्ग में ही वे कंस के आदमियों से भिड़े और उन्हें मार भगाया। बाद में रंगशाला में मल्लों को मार गिराया और आगे उन्होंने कंस को भी मार डाला।

उन्ह बलभद्र मिला संग भाई। जैस राम संग लछमन भाई।।
और मिले संग बहुतै डोटा। लांबछोट और जोटहि जोटा।।[19]

पुत्र -

पुत्र को परिवार का दीपक कहा गया है वही उसका आधार स्तम्भ है। यदि वह अयोग्य निकला तो पारिवारिक सुख-शान्ति एवं प्रतिष्ठा की इतिश्री हो जाती है। 'कन्हावत' में जायसी ने कृष्ण के जन्म का सुन्दर चित्र उपस्थित किया है। प्रातःकाल होने पर सारे गोकुल में यशोदा के पुत्र होने का समाचार मिला, सर्वत्र आनन्द मनाया जाने लगा। ब्राह्मण आये, उन्होंने आशीर्वाद दिया। तीसरे दिन लोगों की दावत हुई, पाँचवे दिन रात-जगा हुआ, फिर घर-घर पकवान बाँटे गये। छठे दिन पंडित बुलाये गये, उन्होंने पत्र देखकर बालक के विष्णु के अवतार होने की बात कही। साथ ही यह भी कहा कि गोकुल में घर-घर पद्मिनी-रूपी गोपियाँ जन्म लेंगी और उनमें एक राही (राधिका) होगी जो उन सबमें विशिष्ट होगी। जिस प्रकार राम के लिए सीता थी उसी प्रकार कृष्ण के लिए राही (राधिका) होंगी।

भा बिहान खबर होइ गयऊ। बालक रात जसुदरो भयऊ।।
नन्द महर घरबाज बधावा। सब गोकुल ततकालै आवा।।
तिसरें देवस भयऊ भोगू। घरघर गोकुल न्योता लोगू।।
पाँचो देवस रात जिह भई। भा रत जगनि सिजा गतगई।।[20]

Copyright © 2019, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

किन्तु आधुनिक दृष्टिकोण से देखा जाए तो पुत्री भी परिवार और देश का नाम प्रायः हर विभाग में रोशन कर रही है। चाहे वह प्रशासनिक सेवा हो डाक्टरी हो, पायलट अथवा खेल का मैदान हो वह हर क्षेत्र में पुत्रों से कहीं अधिक राष्ट्र का नाम रोशन कर रही है।

दान -

सूफी काव्यों में दान के महत्व पर सविस्तार प्रकाश डाला गया है। दिया हुआ दान याचक का तो कल्याण करता ही है। लोक परलोक में दाता के लिए भी कई गुना हितकारी होता है। जायसी ने 'कन्हावत' में हुमायूँ के दानवीरता की भूरि-भूरि प्रशंसा की है।

देहली कहौ छत्रपति नाऊँ। बादशाह बड़ शाह हुमायूँ।।
जै फिरि कीन्ह नवोखंड डांडा। चहुँ दिसि मुँद पखारा खाँडा।।
खोल दीन्ह पुनि बन्द भंडारू। माँगत सब अधान सैसारू।।[21]

परोपकार -

स्वार्थ रहित होकर अन्य व्यक्ति की भलाई करना परोपकार कहलाता है। संसार में अपना भला तो सभी करते हैं किन्तु कुछ दूसरों का भी भला करते हैं। गोस्वामी तुलसीदास ने 'रामचरितमानस' में परोपकार की अत्यन्त सुन्दर व्याख्या की है।

'परहित सरिस धर्म नहि भाई।
पर पीड़ा संग नहि अघमाई।।

जायसी ने कृष्ण को एक परोपकारी राजा के रूप में चित्रित किया है। कृष्ण ने मथुरा में एक धर्मशाला बनवायी। जो भी वहाँ आता, ठहरता, उसे सभी प्रकार की सुख-सुविधा प्राप्त होती थी। जितने भी ऋषि, यति संन्यासी थे, सभी वहाँ आये ठहरे और भोजन किया। कृष्ण ने सुना कि यमुना पार दुर्वासा नामक कोई तपस्वी रहते हैं। वे मात्र दूब (घास) खाकर तप साधना करते रहते हैं। वे ही एक ऐसे थे जो कृष्ण के पास नहीं आये। कृष्ण ने सोचा कि यदि उन्होंने अन्न नहीं खाया तो मेरी दान और सेवा व्यर्थ है।

Copyright © 2019, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

उन्होंने सभी सोलह सहस्र गोपियों को बुलाया और प्रत्येक से एक-एक प्रकार का पकवान बनाने और यमुना पार उस तपस्वी के पास ले जाने और उन्हें भोजन करने को कहा।

कन्हैं कहा सँवर दुरबासा। कबहु न आवा मेरे पासा।।
का मोर कियेंवत्त और सेवाँ। जो वैं कबहूँ अन्नन जेवा।।
सोरह सहस्रहँ करी गोपीं। जउन पार है तपाअ लोपी।।
एक एक बरन लेहु सब धानाँ। सोरह सहस्र करहु पकवाना।।
औ सब डाललेहि के हाथों। लै सो जिवावहु होई एक साथा।।[22]

संदर्भ सूची:-

'वासुदेव शरण अग्रवाल *:* पद्मावत, पृ. *189*
डॉ. सरला शुक्ल : 'हिन्दी सूफी कवि और काव्य', पृ. 72
परमेश्वरी लालगुप्त *:* कन्हावत, पृ. *176*
परमेश्वरी लाल गुप्त कन्हावत, पृ. *120*
परमेश्वरी लाल गुप्त कन्हावत, पृ. *156*
परमेश्वरी लाल गुप्त 'कन्हावत', पृ. *136*
परशुराम चतुर्वेदी :संतकाव्य, पृ. *172*
कबीर ग्रन्थावली : पृ. *21*
परमेश्वरी लाल गुप्तःकन्हावत, पृ. *323*
परमेश्वरी लाल गुप्त कन्हावत, पृ. *133*
रामचन्द्र शुक्ल :तुलसी ग्रन्थावली, पृ. *105*
परमेश्वरीलाल गुप्त कन्हावत, पृ. *313*
गणेशप्रसाद द्विवेदी : 'हिन्दी संत काव्य', पृ. *154*
परमेश्वरी लाल गुप्त कन्हावत, पृ. *227*
परमेश्वरी लाल गुप्त कन्हावत, पृ. *228*
परमेश्वरी लाल गुप्त *:* कन्हावत, पृ. *318*
परमेश्वरी लाल गुप्त *:* कन्हावत, पृ. *134*
परमेश्वरी लाल गुप्त *:* कन्हावत, पृ. *279*

Copyright © 2019, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

परमेश्वरीलाल गुप्त कन्हावत, पृ. *171*
परमेश्वरी लाल गुप्त *:* कन्हावत, पृ. *164*
परमेश्वरी लाल गुप्त *:* कन्हावत, पृ. *135*
परमेश्वरी लाल गुप्त *:* कन्हावत, पृ. *308*

Copyright © 2019, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies